सीमा धामधेरे, सचिव, एमपीएससी

बनाम

महाराष्ट्र राज्य और अन्य

14 दिसंबर, 2007

[डॉ. अरिजीत पसायत और लोकेश्वर सिंह पंत, जे.जे.]

जनहित याचिकाः

राज्य लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित परीक्षा में वृहद स्तर पर कदाचार का आरोप लगाते हुए याचिका- आपराधिक मामले का पंजीकरण- अनुसंधान अधिकारी का स्थानांतरण- उच्च न्यायालय ने पाया कि राज्य सरकार को वस्तुपरक होना चाहिये और स्थानान्तरण के अधीन अधिकारी द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण के प्रति प्रतिकूल दृष्टिकोण नहीं रखना चाहिये और अनुसंधान निष्पक्ष रूप से होना चाहिये- अभिनिर्धारितः उच्चतम न्यायालय द्वारा अनेक निर्णयों में सेवा मामलों में जन हित याचिका के मापदंड को उजागर किया गया है- उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं है- भारत का संविधान- अनुच्छेद 226

जनहित याचिका के तहत एक रिट याचिका यह आरोप लगाते हुए दायर की गयी कि वृहद स्तर पर महाराष्ट्र लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित की गयी परीक्षा में वृहद स्तर पर कदाचार किया गया है। यह

कहा गया है कि आपराधिक मामला संख्या ए.सी.बी. सी.आर. 33/2002 में जांच का परिणाम आने के पूर्व जांच अधिकारी का स्थानान्तरण कर दिया गया। पुलिस महानिदेशक द्वारा शपथ पत्र दायर किया गया था कि सी.आर. 33/2002 का अनुसंधान समाप्त चुका है। अनुसंधान अधिकारी द्वारा एक शपथ पत्र पेश किया गया कि अनुसंधान अभी तक पूर्ण नहीं हुआ है। आयोग का रुख यह था कि बाद में एक और मामला ए.सी.बी. क्रमांक 7/2006 पंजीकृत हुआ। उक्त कार्यवाही को समाप्त करने और ए.सी.बी. 33/2003 का अनुसंधान जारी रखने की प्रार्थना की गयी। उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए रिट याचिका काे निस्तारित किया कि यदि विशेष न्यायालय द्वारा, जिसके समक्ष मामला लंबित था, आवश्यक निर्देश जारी किए गए कि अनुसंधान के निष्कर्ष के उपरांत भी यदि कोई, किसी भी अभियुक्त के विरूद्ध अग्रिम साक्ष्य एकत्रित की जावे और अभिलेख पर ली जावे। उच्च न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी भी की गयी कि अनुसंधान अधिकारी ने सेवा में तीन वर्ष अनुसंधान में दिये है, तो राज्य सरकार को वस्तुपरक होना चाहिये और उसके द्वारा लिये दृष्टिकोण के प्रति प्रतिकूल रूख नहीं अपनाना चाहिये। ए.सी.बी. 7/2006 प्रथम सूचना रिपोर्ट को समाप्त करने के लिये प्रस्तुत किये गये संबद्ध मामले में, उच्च न्यायालय द्वारा निर्देश दिया गया कि दो प्रकरण धारणात्मक रूप से भिन्न हो सकते है और अनुसंधान निष्पक्ष रूप से पुलिस महानिदेशक द्वारा किया जावे और आयुक्त अनुसंधान में सहयोग करे।

तात्कालिक अपीलों में आयोग की ओर से तर्क दिया गया कि आपराधिक कार्यवाही विधायी निकाय की छवि को प्रभावित कर रही है और जनहित याचिका के नाम पर पुलिस अधिकारियों के स्थानान्तरण को चुनौती दी गयी थी जो असंभव था।

अपीलें निस्तारित करते हुए, न्यायालय का अवधारण:

इस न्यायालय द्वारा अनेक निर्णयों में सेवा के मामलों में जन हित याचिका के मापदंड को उजागर किया गया है। दोनों मामलों में प्रभावित व्यक्तियों द्वारा रिट याचिका पेश की गयी है। यह सत्य है कि यदि आरोप सही पाये जाते है तो इससे आयोग की छवि प्रभावित होगी। किंतु यह पारदर्शी तरीके से किये गये अनुसंधान रोकने का आधार नहीं हो सकता। किसी भी संस्थान की विश्वसनीयता उसके अपने पदाधिकारियों पर की गयी पारदर्शी कार्यवाही पर निर्भर करती है। आयोग की ओर से यह भी बताया गया है कि यह सभी संबंधित के हित में होगा यदि परीक्षाएं जिनके बारे में कहा जाता है कि लगभग पांच वर्षों तक आयोजित नहीं की गयी है जल्द आयोजित की जाएं। अध्यक्ष और सदस्यों की चयन की प्रक्रिया तुरंत शुरू की जाए यदि पहले से नहीं किया गया है। यह कहा गया है कि आयोग के नए सचिव ने पदभार संभाल लिया है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप के लिए कोई गुंजाईश नहीं है।

[पैरा 6 और 7] [808-बी; 809-ई-जी; 810-ए]

गुरपाल सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य, [2005] 5 एससीसी 136 संदर्भित किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 2007 का 5954.

बम्बई उच्च न्यायालय के निर्णय व आदेश दिनांकित 8.6.2006 और 5.7.2006 से, जो कि क्रमशः प्रस्ताव की सूचना संख्या 2006 की 265 रिट याचिका संख्या 2003 की 482 और रिट याचिका संख्या 2003 की 482 में पारित किये गए।

के साथ

आपराधिक अपील संख्या 2007 की 176

वी. ए. मोहता, मकरंद डी. अदकर, विजय कुमार और विश्वजीत सिंह - अपीलार्थी के लिए।

गुलाम ई. वाहनवती, एस.जी. सेंथिल जगदीशन और आर. के. अदसुरे - प्रत्यर्थीगण की ओर से।

न्यायालय का निर्णय पारित किया गया

डॉ. अरिजीत पसायत, जे.

1. अनुमति प्रदत्त की गयी।

2. ये दोनों अपीलें इस अर्थ में आपस में जुड़ी हुई हैं कि जुड़े हुए मामलों में उनका अपना आव्यूह है। एसएलपी संख्या 12279/2006 से संबंधित अपील में 2003 की रिट याचिका 482 के आदेश को चुनौती दी गई है, जबकि एसएलपी (सीआरएल) संख्या 5498/2006 से संबंधित अपील में 2006 की रिट याचिका संख्या 1048 के आदेश को चुनौती दी गई है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, रिट याचिकाएँ इस भाव में जुड़ी हुई हैं कि दो पेशेवर अधिवक्ताओं द्वारा कुछ समाचार पत्रों की रिपोर्ट के आधार पर यह आरोप लगाते हुए एक रिट याचिका दायर की गई थी कि महाराष्ट्र लोक सेवा आयोग (संक्षेप में `आयोग') द्वारा आयोजित परीक्षा में वृहद स्तर पर कदाचार हुआ था। एसीबी सी.आर. संख्या 33/2002 पंजीबद्ध किया गया था और एस.बी. पुजारी आरोपों का प्रारम्भिक अनुसंधान कर रहा था। रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा आरोप लगाया गया कि उक्त अनुसंधान अधिकारी द्वारा साक्ष्य और आदेशिकाआेंं का संकलन श्रीमती सयाली जोशी व अन्य को गिरफ्तार करने के लिये किया गया है और और ऐसे कृत्यों से बचने के लिए उसका स्थानान्तरण 31.1.2003 को कर दिया गया था। समय-समय पर 22 अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया था। 12.5.2006 को तत्कालीन महानिदेशक द्वारा एक शपथ पत्र यह दर्शाते हुए दायर किया गया था कि उक्त अपराध संख्या 33/2002 का अनुसंधान समाप्त हो चुका है। श्री पुजारी द्वारा शपथ पत्र दायर किया गया कि अनुसंधान अभी पूर्ण नहीं हुआ है। उसका स्थानांतरण सामान्य स्थानांतरण आदेश दिनांक 6.9.2006 द्वारा

किया गया था। श्री अनिल पी. धेरे ने एक शपथ पत्र यह दर्शाते हुए दायर किया कि अनुसंधान पूर्ण है। श्री एसबी पुजारी ने अनुरोध किया कि श्री अनिल पी. धेरे के शपथ पत्र की प्रतिक्रिया के लिए उन्हें और समय की आवश्यकता है। लेकिन उच्च न्यायालय ने इस पर विचार करना जरूरी नहीं माना. उच्च न्यायालय का विचार था कि यदि विशेष न्यायालय, जिसके समक्ष मामला लंबित था, आवश्यक निर्देश जारी किये है, अनुसंधान के निष्कर्ष के बाद भी, यदि कोई हो, किसी भी अभियुक्त व्यक्ति के खिलाफ अतिरिक्त सामग्री एकत्र की जा सकती है जिसे अभिलेख पर लाया जा सकता है। आयोग का रुख यह था कि कालान्तर में एक और मामला दर्ज किया गया यानि एसीबी 7/2006। उक्त कार्यवाही को समाप्त करने एवं एसीबी 33/2002 में अनुसंधान जारी रखने की प्रार्थना की गई। उच्च न्यायालय ने महसूस किया कि इस पर रिट याचिका संख्या 482/03 में पारित आदेशों से प्रभावित हुए बिना गुणावगुण के आधार पर विचार किया जाएगा। उच्च न्यायालय ने पाया कि श्री अनिल पी. धेरे और श्री एस.बी. पुजारी के बीच अनुसंधान को लेकर अलग-अलग धारणा थी। उच्च न्यायालय ने तदनुसार रिट याचिका का निस्तारण कर दिया। उच्च न्यायालय को श्री एस.बी. से लगा पुजारी ने जांच में तीन साल का समय लगाया है, राज्य सरकार निष्पक्ष होगी और श्री पुजारी द्वारा उठाए गए रुख पर कोई प्रतिकूल विचार नहीं करेगी। यह स्पष्ट किया गया कि श्री एसबी

पुजारी के शपथ पत्र का उपयोग किसी अन्य कार्यवाही में नहीं किया जाएगा।

3. संबंधित मामले में 2006 की प्रथम सूचना रिपोर्ट संख्या 7 को इस आधार पर समाप्त करने की प्रार्थना की गई थी कि अपराध संख्या 33/2002 लंबित था और वह अतिव्यापी था। उच्च न्यायालय ने महसूस किया कि दोनों वैचारिक रूप से भिन्न थे। यह निर्देश दिया गया कि अनुसंधान श्री जी.डी. विर्क, पुलिस महानिदेशक, बम्बई के पर्यवेक्षण में निष्पक्ष रूप से किया जाएगा और आयोग को अनुसंधान में सहयोग करना हाेगा। महानिदेशक को समय-समय पर प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया।

4. दरअसल आयोग के विद्वान अधिवक्ता का रुख यह था कि आपराधिक कार्यवाही के परिणामस्वरूप वैधानिक निकाय को नुकसान हुआ है। अंततः प्रतीत होता है कि जनहित याचिका के नाम पर पुलिस अधिकारी के स्थानांतरण को प्रश्नगत किया गया है जो अनुचित है। कार्यों की प्रकृति को लेकर अलग-अलग धारणा के कारण आयोग के अधिकारी अनावश्यक रूप से उलझे हुए हैं। आयोग का अंतिम उद्देश्य परीक्षाएँ आयोजित करना है। लंबे समय से परीक्षाएं नहीं हुई है।

5. प्रतिक्रिया में, श्री गुलाम ई. वाहनवती, राज्य के साॅलिसिटर जनरल ने कहा कि रिट याचिकाएं पोषणीय नहीं हैं क्योंकि जनहित याचिका

में किसी अधिकारी के स्थानांतरण पर सवाल नहीं उठाया जा सकता था। यह भी उजागर किया गया है कि उसी अभिवाक पर प्रत्यर्थी संख्या 7 सुश्री सीमा पी. धामधेरे, सचिव, एमपीएससी के स्थानांतरण पर सवाल उठाने वाली याचिकाएं दुर्भावनापूर्ण थीं। उक्त सुश्री सीमा पी. धमधेरे ने, एमपीएससी के सचिव की हैसियत में एसएलपी संख्या 12279/2006 दायर की है जिसमें अनुमति प्रदत्त की गयी है। श्री पुजारी, जो व्यक्तिशः उपस्थित हुए थे, ने निवेदित किया है कि क्योंकि उन्होंने कुछ हानिकारक सबूतों और सामग्रियों का पता लगाया है, जिससे पदस्थापित अधिकारी बेनकाब हो जाते, इसलिए उनका स्थानांतरण किया गया है।

6. सेवा के मामलों में जनहित याचिका के मापदंडों को इस न्यायालय द्वारा कई मामलों में उजागर किया गया है। गुरपाल सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य [2005] 5 एससीसी 136 में इसे इस प्रकार नोट किया गया है:

"जनहित याचिका के रूप में शैलीबद्ध याचिका पर विचार करने का दायरा, विशेष रूप से किसी कर्मचारी की सेवा से जुड़े मामलों में याचिकाकर्ता के सुने जाने के अधिकार का परीक्षण इस न्यायालय द्वारा विभिन्न मामलों में किया गया है। न्यायालय को संतुष्ट होना होगा (ए) आवेदक की साख के बारे में; (बी) उसके द्वारा दी गई सूचना की प्रथम दृष्टया सत्यता या प्रकृति; (सी) जानकारी अस्पष्ट और अनिश्चित नहीं है।

जानकारी में गंभीरता और संजीदगी शामिल होनी चाहिए। न्यायालय को दो परस्पर विरोधाभासी हितों के बीच संतुलन बनाना होगा; (i) किसी को भी दूसरों के चरित्र को धूमिल करने वाले आक्रामक और लापरवाह आरोपों में लिप्त होने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए; और (ii) सार्वजनिक रिष्टि से बचना और परोक्ष उद्देश्यों के लिए न्यायसंगत कार्यकारी कार्यवाहियों पर हमला करने की मांग करने वाली रिष्टिकारक याचिकाओं से बचना। ऐसे मामले में, हालाँकि, न्यायालय उदार होने का जोखिम नहीं उठा सकता। यह देखने में बेहद सावधानी बरतनी होगी कि सार्वजनिक शिकायत के निवारण की आड़ में, यह संविधान द्वारा कार्यपालिका और विधायिका के लिए आरक्षित क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करता है। न्यायालय को ढोंगी और व्यस्त निकायों या सार्वजनिक-उत्साही पवित्र पुरुषों के रूप में अभिनय कर हस्तक्षेप करने वालों से निपटने के दौरान बेरहमी से कार्य करना होगा। वे निःस्वार्थ रूप से सार्वजनिक कार्य करने का दिखावा करते हैं, हालांकि उनके पास सुरक्षा के लिए आमजन या यहां तक कि स्वयं का कोई हित नहीं है।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उन याचिकाओं को ख़त्म करने का समय आ गया है, जिनकाे भले ही जनहित याचिका के रूप में शीर्षांकित किया गया है, लेकिन उनका सार कुछ और है। यह आश्चर्यजनक है कि न्यायालय बड़ी संख्या में तथाकथित जनहित याचिकाओं से भरे पड़े हैं, जहां शून्य प्रतिशत को भी वैध रूप से जनहित याचिका कहा जा सकता है। यद्यपि इस न्यायालय द्वारा बड़ी संख्या में मामलों में जनहित याचिका

के मापदंडों का संकेत दिया गया है, फिर भी वास्तविक इरादों और उद्देश्यों से बेपरवाह होकर, उच्च न्यायालय ऐसी याचिकाओं पर विचार कर रहे हैं और मूल्यवान न्यायिक समय बर्बाद कर रहे हैं, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अन्यथा इसका उपयोग वास्तविक मामलों का निस्तारण में किया जा सकता है। हालांकि डॉ. दुर्योधन साहू और अन्य बनाम जीतेन्द्र कुमार मिश्रा और अन्य एआईआर (1999) एससी 114 में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि सेवा मामलों में जनहित याचिकाओं पर विचार नहीं किया जाना चाहिए, सेवा मामलों से संबंधित तथाकथित जनहित याचिकाओं का आना अदालतों में बेरोकटोक जारी है और अनोखे ढंग से उन पर विचार किया जा रहा है। उच्च न्यायालय कम से कम इतना तो कर ही सकते हैं कि उक्त निर्णय के आधार पर उन्हें बाहर कर दें। दूसरा दिलचस्प पहलू यह है कि जनहित याचिकाओं में, आधिकारिक दस्तावेजों को बिना यह बताए संलग्न किया जा रहा है कि याचिकाकर्ता उन्हें कैसे धारित करता है। एक मामले में, यह देखा गया कि इसके कब्जे के संबंध में एक दिलचस्प उत्तर दिया गया था। यह कहा गया कि एक पैकेट सड़क पर पड़ा था और जब याचिकाकर्ता ने उत्सुकतावश उसे खोला, तो उसे शासकीय दस्तावेजों की प्रतियां मिलीं। जब भी कब्जे को स्पष्ट करने के लिए ऐसे तुच्छ अभिवाक लिये जाते हैं, न्यायालय को न केवल याचिकाओं को खारिज करना चाहिए बल्कि अनुकरणीय खर्चा भी अधिरोपित किया जाना चाहिए। न्यायालयों के लिए यह वांछनीय होगा कि

वे निरर्थक याचिकाओं को छांटें और जैसा कि ऊपर कहा गया है, उन्हें खर्चे के साथ खारिज कर दें ताकि यह संदेश सही दिशा में जाए कि परोक्ष उद्देश्य से दायर की गई याचिकाओं का न्यायालयों में अनुमोदन नहीं होता है।"

7. दोनों मामलों में प्रभावित व्यक्तियों द्वारा रिट याचिका प्रस्तुत की गयी है। यह सच है कि अगर आरोप सही पाए जाते है तो इससे आयोग की छवि पर असर पड़ेगा। लेकिन यह अनुसंधान को रोकने का आधार नहीं हो सकता जो पारदर्शी तरीके से किया जा रहा है। किसी भी संस्थान की विश्वसनीयता उसके पदाधिकारियों की पारदर्शी कार्रवाई पर निर्भर करती है। आयोग के विद्वान अधिवक्ता ने बताया कि यह सभी संबंधित पक्षों के हित में होगा यदि वे परीक्षाएं, जिनके बारे में कहा जाता है कि लगभग पांच वर्षों से आयोजित नहीं हुई हैं, जल्दी आयोजित की जाएं। अध्यक्ष और सदस्यों के चयन की प्रक्रिया यदि अभी तक नहीं हुई है तो तुरंत शुरू की जाएगी। यह बताया गया है कि आयोग के नये सचिव ने पदभार ग्रहण कर लिया है।

8. विद्वान सॉलिसिटर जनरल द्वारा यह बताया गया है कि रिट याचिका 7/2003 पले से निस्तारित हो चुकी है।

9. हमें उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं दिखती है। तदनुसार अपीलों का निस्तारण किया जाता है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अरुण जांगिड़ (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।